कासों कहों मैं दरदिया

ऋता शुक्ल

कासों कहों मैं दरदिया

आरा के शिवगंज मुहल्ले की दूसरी गली के पतले मोड़ पर बारीक ईंटों से चिना हुआ एक पुराना मकान है... । चूने और सीमेंट की जगह-जगह से उधड़ी हुई परतोंवाले उस मकान की हालत दिनोदिन जर्जर होती चली जा रही है-पूरे सत्रह साल बाद इस घर की चौखट पर खड़ी मैं अपने आपसे प्रश्न करती हूँ – भीतर जाना उचित होगा.... कैसी होंगी बुआ? मुझे पहचान सकेंगी क्या...? जिंदगी की आपाधापी से

https://www.hindiadda.com/kason-kahon-main-daradiya/

फुरसत के कुछ क्षण चुराकर किसी तरह यहाँ तक आ पाई हूँ तो क्या यूँ ही वापस लौट जाऊँ...?

दरवाजे पर ठिठकी-सी खड़ी हूँ... तभी गलियारे के अँधेरेपन को टटोलता हुआ एक झुर्रीदार चेहरा धीरे-धीरे सामने उभरता है-दुपल्ली टोपी, बारीक तंजेब का फटा हुआ कुरता, जगह-जगह से उधड़ी हुई स्याह जैकेट, पैबंद जड़े घुटनोंवाला अधमैला-सा तंग मोहरी का पाजामा -

उसमान चचा...! मेरे जेहन में पान की गिलौरियों का रस लेता जिंदगी की रौनक से भरा एक विहँसता हुआ चेहरा परछाईं बनकर चला आता है....

बड़े हुजूर, अपनी सुमना बिटिया के गले में माशाल्ला क्या मिठास है - आप इन्हें गाने-बजाने की तालीम जरूर दिलवाएँ, मालिक... कसम खुदा की – ये थोड़ी-सी हुनरमंद हो जाएँ तो...

अपनी चोंच बंद करो, उस्मान मियाँ... हमारे खानदान की बहू-बेटियाँ और गाने की तालीम ! हुँ... ह... यह बताओ, सुबरातन को हमारा बयाना पहुँचा दिया कि नहीं...? छठी की तारीख याद है न... बीस जनवरी...

उसमान चाचा... आपने मुझे नहीं पहचाना न... मैं सुमना हूँ, सुमना... !

अपनी मैली आस्तीन से आँखों की कोर पर जम आए लिसलिसेपन को रगड़कर पोंछते हुए उसमान चचा बड़ी बेताबी से आगे आते हैं-कौन... पंडित शिवमंगल तिवारी को बड़की पोती... अरे बिटिया... तू कब आई... आ जा, भीतर चली आ !

सीलन से भरा लंबा गलियारा... जगह-जगह तिलचट्टों और चींटों की जमात... चचा हौसले से उमगते हुए मुझे फर्श की गंदगी से बचने की सलाह देते जल्दी-जल्दी आगे की ओर बढ़ रहे थे -

सुबरातन... देखो तो सही, कौन आया है...?

लंबे आँगन के उस पारवाली कोठरी की दहलीज पर मैं खड़ी हूँ-वक्त का एक-एक लमहा क्या इसलिए गुजरता है कि उसकी छाप एक हादसे की शक्ल अख्तियार कर ले... सुबरातन बुआ के साँवले-सलोने चेहरे की सारी आब समय के बेरहम हाथों से निचोड़ ली गई है। भरी-पूरी सुडौल कायावाली बुआ हड्डियों का ढाँचा-मात्र रह गई हैं। मैं धीरे से उनके पैताने बैठ जाती हूँ –

बुआ, मुझे पहचाना?

कौन...? डी.एस.पी. साहिब की पोती न...

किसी पुरानी मसजिद की सुनसान बारादरी में जैसे अजान का पहला सुर फूटा हो-तेरी छठी में सात दिन तक हमने गाना-बजाना किया था। लाल कचकड़े की गुड़िया-सी थी तू, तेरी अम्मा ने तुझे मेरे आँचल में उछाल दिया था-लो सुबरातन... आज से यह तुम्हारी बेटी हुई... ! तेरे पहले एक भाई होकर गुजर गया था... हमने टोटका किया, अपनी चौखट की माटी के मोल तुझे खरीद कर तेरी अम्मा को दे दिया था ! तुझे नहीं पहचानेंगे री... आ बैठ... . !

सुबरातन बुआ की पुतलियों में गुजरे हुए वे सारे क्षण हीरे की बारीक कनियों की तरह झिलमिला उठते हैं –

तनिक सहारा दे, बिटिया... आ इधर मेरे पास आ... तुझे जी भरकर देख तो लूँ... मुई आँखें भी जवाब देने लगी हैं अब तो...

सुबरातन बुआ की सख्त हथेलियाँ की जकड़न से घबड़ाकर मैं कमरे में चारों तरफ अपनी निगाहें घुमाने लगती हूँ-हारमोनियम, ढोलकी, झाँझ, मजीरा... सामनेवाले चौड़े आले पर सारे बाजे खामोश पड़े हैं... गर्द-गुबार से भरे मैले ओढ़ने का कोना उठाकर उनकी सोई हुई आत्मा सुरों के संसार को फिर से जगाना चाहती है... बरसों पुराना वह खनकता-महकता हुआ संसार... गुलाबी सलवार-कुरते के ऊपर सुनहला काम किया हुआ जालीदार दुपट्टा। बुआ के आगे ढोलकी रखी हुई है। उसकी डोरी को अपने घुटनों में फँसाकर वे उसके छल्ले दुरूस्त करती हैं... फिर एक अदब-भरी खनकती हुई हँसी-नई बहुरिया के पैरों में जैसे पहली बार झाँझ खनक उठी हो-फरमाइए काकीजी, कौन-सी चीज उठावें... सोहर कि खिलौना... केतकी, तू मजीरा सँभाल और रामदेई, तू घुँघरू पकड़ ले...

कोसिला लुटावेली हाथ के कँगनवा

दशरथ लुटावेले सगरे भुवनवा..

संतानहीना नारी की सनातन पीड़ा को उभारनेवाले गीत के मर्मभेदी सुर में खोई हुई बुआ के मुँह से कढ़ते बोलों में हर बार एक नई कसक होती। ढोलकी स्तब्ध, मजीरा

मौन... झाँझ नीरव... मधु सने पंखोंवाले भँवरे के धीमे गुंजार-सी बुआ की विकल प्रार्थना-

गंगाजी के ऊँच अररवा तिरियवा एक तप करे हो

गंगा अपनी लहर हमें देहु त हम डूबी मरीं न हो...

गीत के बोलों में श्रावणी मेघों की आर्द्रता होती थी। दादी का आँचल बरबस पलकों तक उठ जाता था-जियऽ बचिया, मन-परान जुड़वा दिहलू... देवकीजी के कचोट तहरा आत्मा में उजागर हो गंइल, सुबरातिन... बचिया!

बुआ धीरे से हँसकर दादी के पाँव छू लिया करतीं...

अम्मा की नजर बचाकर बुआ के घर घंटों बैठे रहने में कैसा अनोखा आनंद आता था न...

इसी आँगन में बड़ी-सी जाजिम बिछाई जाती... हर साँझ सुबरातन बुआ की नई-नई चेलियों का जमावड़ा होता-कजरी, बारहमासा, चइता-फाग, निरगुन... भजन-कीर्तन...

दादाजी ने बुआ को लोकगीतों के चलते-फिरते शब्दकोश का खिताब दे रखा था।

रामदेई, जरा लड़कियों को सँभाल तो, बाहर सहन में बड़े हुजूर आए हैं-मैं उन्हें देख लूँ... !

बड़े काकाजी आप...?

साँझ की हवाखोरी पर निकला था-बच्ची, यह बता... कि अभी-अभी तू ही वह निर्गुन गा रही थी न... कहँवा से जीव आइल...

तेरे गले में सरस्वती का वास है, सुबरातन, तेरा यह हुनर तुझे बड़ी इज्जत बख्शेगा-अच्छा, चलता हूँ... !

दादाजी के इस रूझान और मेरी जिद को देखकर ही उसमान चचा ने हिम्मत जुटाई थी-बिटिया के गले में कुदरती लोच है, हुजूर, गाने के पीछे इसकी दीवानगी देखकर बड़ी उम्मीद बँधती है। आप इजाजत दें तो...

दादाजी गंभीर हो गए थे-हमारे गाँव में यह चलन नहीं है, उसमान, सुबरातन की कला की खूब कदर करते हैं हम; लेकिन सुमना... उसकी चेली बने...

एक दिन दादाजी ने रसोईघर से आती गुनगुनाहट भाँप ली थी -

चइत मासे जिया अलसाने हो रामा... चइत ही मासे...

सुमना... इधर आ... ! तेरी अम्मा ने खबर दी है, तू रोज स्कूल से लौटकर सुबरातन के घर जाती है... यह ठीक बात नहीं, बच्ची, आइंदे ऐसा...

लेकिन आप भी तो रोज उनके यहाँ जाते हैं, दादाजी... अम्मा उन्हें अपने पलंग पर बिठाकर कजरी जंतसार के गीत सुनती हैं। दादाजी को उनके गाए भजन कितने पसंद हैं, फिर मैं ही...

बुआ की बेचैन उँगलियों की छुअन मुझे सहसा वर्तमान की ओर खींच लाती है...

तुझे याद है, बिटिया, तूने एक बार ढोलकी लेने की जिद की थी और हमने कहा था-खुदा सलामत रखें... जिस दिन शादी का जोड़ा पहनकर ससुराल जाने लगेगी हमारी सुमना, उसी दिन इसकी डोली में चुपके से एक ढोलकी रख देंगे... यह उसे बजा-बजाकर अपनी सास को रिझावेगी... !

सुबरातन बुआ का परिहास मुझसे झेला नहीं जाता... यह आपकी क्या दशा हो गई है, बुआ... कहाँ गए सारे लोग... रामदेई, केतकी, राधिका, नौशाबा...

बुआ की कफ से जकड़ी हुई छाती में से घरघराहट की-सी ध्वनि निकलती है - हमारा हुनर गुजरे हुए वक्त की धरोहर था, बचिया... ऐसी धरोहर, जिसकी ओर अब कोई एक निगाह डालने की भी जरूरत नहीं समझता... बड़े काकाजी, काकीजी जैसे लोग चले गए... वह हुनर अफजाई भी उनके साथ ही चली गई। अब तो गाने-बजानेवाली नई-नई मशीनें आ गई हैं, बिटिया-बाजार में जाओ और मोल देकर मनचाहा तवा खरीद लाओ... गले की एक लोच पर फिदा होकर सिकड़ी-तिसड़ी लुटानेवाले रईस खानदान अब कहाँ...? तेरी सुबरातन बुआ के सीने में उन दिनों की यादें-भर दफन होकर रह गई हैं, बिटिया... खैर, छोड़ इन पुरातनी बातों को, तू अपनी बता... कैसी है? बाल-बच्चे... जँवाई बाबू... सुना कि बड़ी आलिम-फाजिल हो गई है री... सुमना...?

तुम्हारे सभी पुराने गीतों की एक किताब बनानी है, बुआ... यहाँ अपनी भतीजी की शादी के सिलसिले में आई हूँ... कल फिर तुमसे मिलने आऊँगी, इसी वक्त...

बड़ी भाभी, क्या ऐसा नहीं हो सकता कि बारातवाले दिन सुबरातन बुआ को दिन-भर के लिए बुलवा लिया जाए...?

कौन सुबरातन बुआ**?**

बड़ी भाभी के मँझले बेटे रवि की विनोदवृत्ति सहसा सचेष्ट होती है **-**

बड़ी बुआ के अतीत-दर्शन का जीता-जागता सबूत हैं उनकी सुबरातन बुआ, अरे माँ, तुम समझ नहीं पाईं न... भई, दूसरी गली के मुहानेवाले खंडहरनुमा मकान में जो बुढ़िया रहती है न... जिसके साथ वह दोहरी कमरवाला उसका भाई... क्या नाम है-उसमान, हाँ-हाँ, उसमान मियाँ... वही तो... आज बुआ अपने उसी जिंदा कालपात्र की खोज-खबर लेने गई थीं। सुना है, बुढ़िया किसी जमाने में खूब गाती थी। अब तो खिड़की के सहारे बैठी दिन-भर खाँसती...

मुझसे रहा नहीं जाता-अँगरेजी लहजे की पढ़ाई ने यही प्रशिक्षण दिया है, रवि... अपने बड़े-बुजुर्गों की यूँ मखौल उड़ाओ... !

रवि कुछ कहे**,** इसके पहले बड़ी भाभी मेरे प्रस्ताव का सहर्ष अनुमोदन कर देती हैं**-**

अम्माजी जिंदा थीं तो उन्हीं के मुँह से मैंने इनका नाम सुना था... बीबीजी, आप उन्हें न्योता दे आइए... ! सुना है, इस घर की हर खुशी में वे शामिल हुई हैं... आज इतने वर्षों बाद... यह खुशी का मौका आया है तो...

मेरे प्रस्ताव के अटपटेपन पर सुबरातन बुआ चिहुँक उठती हैं-सुनते हो उसमान, इस पगली की जिद-भरी बातें... पाँच बरस हो गए... आखिरी बार पहली गली के रामदेव ठाकुर के घर जलसे में... उसके बाद से साँस की ऐसी तकलीफ उभरी कि... उसमान, इसे समझाओ भाई, अब हम गाने-बजाने के काबिल कहाँ रहे जो...

सुबरातन बुआ की निगाहें हसरत का पैमाना बनकर कमरे की ताख पर रखे बाजों के साथ जुड़ी रह जाती हैं**-**

‘रामदेई गले के घाव की पीर भुगतती मर गई, केतकी ने गाने-बजाने से संन्यास ले लिया; अब तो मेरी बची-खुची जिंदगी है। इन अभागे बाजों की मुकम्मल खामोशी का बेइंतहाँ दर्द बाँटती-बटोरती हुई किसी तरह काट रही हूँ

मुझे न जाने क्या सूझती है... मैं ताख पर रखी ढोलकी को उठा लाती हूँ। ढीली पड़ी उसकी अँगूठियों को कसने की कोशिश में मेरे अकुशल हाथों की हार होती देख बुआ धीरे से हँस देती हैं।

तो तू नहीं मानेगी, ला... ढोलकी इधर दे...

गीत के बोल सुबरातन बुआ के गले से पहले अस्पष्ट गुनगुनाहट के रूप में उभरते हैं... फिर बारीक लय की मीठी उठान एक नई जोत की लकीर खींचती हुई गलियारे के सी

लन-भरे नीम अँधेरे को दीपित कर जाती है। उखड़ी हुई ंइंटों, बदबूदार गड्ढों से भरी अँगनाई में देंखते-ही-देखते झकाझक सफेद जाजिम बिछ जाती है। उसमान चचा हारमोनियम पर कजरी का पहला सुर निकालते हैं - रामदेई, केतकी, नौशाबा-सबकी आँखों में आतुर प्रतीक्षा है, गोटेदार गुलाबी दुपट्टा ओढ़कर सुबरातन बुआ ढोलकी से मत्था छुलाती सचेष्ट हो जाती हैं, गला साफ करने की बारीक-सी आवाज...

उसमान चचा इशारा करते हैं - शुरू करो आपा...

कुहुकि के बोलेले कोइलिया हो राम

पिया परदेसवा... !

कासों कहों मैं दरदिया हो राम...

पिया परदेसवा...

यह दर्द कोयल के मीठे बोल सुनकर कसक से भरी विरहिणी स्त्री का नहीं, बल्कि सुबरातन बुआ का है, वे अपना दर्द किससे कहें...? कासों कहों मैं दरदियाsss आलाप के तार पर खिंचता हुआ सुर बीच में ही लड़खड़ाकर टूट जाता है। बुआ की साँस उखड़ रही है, कफ से भरी छाती को चीरता हुआ खाँसी का जबरदस्त रेला...

उसमान चचा बाहरी सहन से भागते हुए अंदर आते हैं - इन्हें गाने-बजाने की बिलकुल मनाही है, बिटिया... हकीम साहब की दवा चल रही है। इनके फेफड़े... आप

नहीं मानेंगे आपा...? सुबरातन बुआ की छलछलाई आँखों में अपने नहीं गा पाने का दर्द एक गहरी शिकस्त के साथ उमड़ पड़ता है। मुझसे उन आँखों का दर्द झेला नहीं जाता... गली के आखिरी मुहाने तक बुआ के कलेजे को निचोड़ता हुआ वह दर्द मेरा पीछा करता रहता है हमेशा-हमेशा के लिए-

कासों कहों मैं दरदिया... हो... रामा...

https://www.hindiadda.com/kason-kahon-main-daradiya/